अथ पंचमोऽध्यायः

कर्मसंन्यासयोग

(कृष्णभावनाभावित कर्म)

12/5

अर्जुन उवाच।
संन्यासं कर्मणां कृष्ण पुनर्योगं च शंससि।
यच्छ्रेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम्।।१।।

अर्जुनः उवाच=अर्जुन ने कहा; **संन्यासम्**=संन्यास की; **कर्मणाम्**=सम्पूर्ण कर्मों के; **कृष्ण**=हे श्रीकृष्ण; **पुनः**=फिर; **योगम्**=भक्तियोग (की); **च**=भी; **शंससि**=आप स्तुति कर रहे हैं; **यत्**=जो; **श्रेयः**=कल्याणकारी हो; **एतयोः**=इन दोनों में; **एकम्**=एक; **तत्**=वह; **मे**=मेरे लिए; **ब्रूहि**=कहिये; **सुनिश्चितम्**=निश्चित।

अनुवाद

अर्जुन ने कहा हे कृष्ण! पहले आप मुझे कर्मों का संन्यास करने को कहते हैं और फिर भक्तिभावित कर्म की प्रशंसा करते हैं। इसलिये अब कृपापूर्वक इन दोनों में से जो एक निश्चित किया हुआ कल्याणकारी साधन हो, वह मेरे लिये कहिये।।१।।

तात्पर्य

भगवद्गीता के इस पाँचवें अध्याय में श्रीभगवान् कहते हैं कि भक्तिभावित कर्म शुष्क (स्वारस्यशून्य) मनोधर्म से उत्तम है। भक्तिपथ अधिक सुगम है, क्योंकि दिव्य स्वरूपा होने के कारण भक्ति साधक को कर्मबन्धन से मुक्त कर देती है।